मनुहारी यादें

मुनेन्द्र सिंह

BlueRose ONE.com
Stories Matter
NewDelhi • London

BLUEROSE PUBLISHERS
India | U.K.

Copyright © Munendra Singh 2025

All rights reserved by author. No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the prior permission of the author. Although every precaution has been taken to verify the accuracy of the information contained herein, the publisher assumes no responsibility for any errors or omissions. No liability is assumed for damages that may result from the use of information contained within.

BlueRose Publishers takes no responsibility for any damages, losses, or liabilities that may arise from the use or misuse of the information, products, or services provided in this publication.

BlueRoseONE.com
Stories Matter
NewDelhi • London

For permissions requests or inquiries regarding this publication, please contact:

BLUEROSE PUBLISHERS
www.BlueRoseONE.com
info@bluerosepublishers.com
+91 8882 898 898
+4407342408967

ISBN: 978-93-7018-000-0

Cover design: Dharamveer Sesodia
Typesetting: Namrata Saini

First Edition: May 2025

प्रवेश

मैं इस काव्य संग्रह के कवि को तब से जानता हूं जब जीवन यात्रा के सुप्रभात में हम एक ही विद्यालय में साथ पढ़ाते थे, वे अंग्रेजी पढ़ाते थे और मैं हिंदी। मैं ने तभी अनुभव किया कि श्री मुनेन्द्र जी की हिंदी में एक गजब का सम्मोहन है। उनके शब्दों में एक बाल सुलभ निश्छलता है तो एक पवित्र हृदय की निर्मल गहराई है। मैंने अपने जीवन में ऐसे बहुत कम लोग देखे हैं जो बाहर भीतर एक जैसे हों, जो मन में हो वही वाणी में भी हो। ये कवि बिल्कुल वैसा ही है। शुद्ध रूप से हृदय का कवि, इनकी एक भी कविता में आपको दिमाग की छाप नजर नहीं आयेगी। कविताएं इतनी सच्ची हैं कि पढ़ते - पढ़ते कई बार नेत्र सजल हो जाते हैं, यदि आप ने एक बार पुस्तक पढ़ना शुरू किया तो आप पूरी पढ़े बिना रह नहीं सकोगे।

इस काव्य संग्रह की कविताएं कविता नहीं, निश्छल अनुभूतियों की गहराइयों से निकली हिंदी की ऋचाएं हैं

जो पाठक की आत्मा को छू जाती हैं, ये कविताएं आपको भाव संवेदनाओं के एक ऐसे अद्भुत संसार में ले जाती हैं जहां सामाजिक जीवन का सरोकार है, निश्छल प्रेम है, वात्सल्य है, प्रकृति का मनभावन रुप है, सुकून के कुछ पल हैं, तो मुस्कुराने की वजह भी हैं।

कवि की ये यात्रा उनकी पहली रचना 'तग़य्युर' से शुरू होती है, जो जीवन के स्वाभाविक बदलाव को रेखांकित करती है, एक अन्य रचना "आत्मश्लाघा की लौ" में कवि समाज के बदलते स्वरूप और टूटते बिखरते सम्बंधों की ओर इंगित करते हुए कहता है,

मेल मिलाप, सहयोग घनेरा, अब रूहों के साये,

अंजान डगर, लंबी पगडंडी के राही,
सब हुए पराये,
'अद्भुत है तात तुम्हारा जीवन' में एक बेटी की वेदना अभिषिक्त ये पंक्तियां देखें।
कितना बोझ उठाया तुमने,
समझ मुझे सब आती वो बातें हैं
राह पकड़ जब जीवन गृहस्थ बसाया,
मन ही मन तुम हर्षाये,
कहती अल्बम की सारी तस्वीरें हैं
यों चुपचाप निकल जाओगे
ओ ! पापा तुम तो ऐसे न थे,
कविता ' संबर्धन ' में प्राकृतिक जीवन का स्निग्ध रुप कुछ यूं व्यक्त हुआ है
कलरव करते, बौराए आमों की शाखों पर
शुग्गा के प्यार भरे निवाले
नेह सींचती, माता भोरी
अंकुर आंख सुहावन,
कविता ' मानस पटल पर खिंचे चित्र' अतीत की मनोहारी स्मृतियों का अद्भुत चित्रांकन है। देखें,
सुरखाब रंगों के चश्मे फूटे
नयन मूंद जब चित्रावलि खोली
प्रगट हुई भोली सी सूरत,
कुंतल काले, गोल कपोल
तोतली बोली,
कविता 'और भी हैं राहें' में कवि जीवन में सतत आगे बढ़ने का आव्हान करता प्रतीत होता है।

नींद उनींदी, पहर तीसरा, अलसाई सहर का
रवि संदेशा आगे,
चल उठ, पकड़ राह कोई अनजानी,
तोड़ मोह - मोह के धागे,
मुड़ - मुड़ देखा, पीछे बेसुध ठहरा,
बेबस एक सहारा,

आयु की सांध्य वेला में जीवन का हिसाब किताब करती ये रचना ' ऐसा मैंने क्या कर डाला ' आप भी देखिए।

देख के अपनी भंगुर काया,
सत्य यही है, जाना है,
मन बगिया में सूखे रिश्तों को लख
दिल फिर फिर रोया है,
उद्वेलित अंतर्मन में एक प्रश्न उठा
क्या खोया, क्या पाया है ?

प्रकृति के औदार्यपूर्ण, निष्कलुष सौंदर्य को दर्शाती कविता ' आकर्षण ' के कुछ अंश।

दूर कहीं सावन की बौछारों से हरियाई चोटी से,
अवाध सरकते झरने
फिर ठहरे हैं झील तले चुपचाप,
दूर देश तक ले जाते पथ,
अगणित पुष्पक तैर रहे हैं
विस्तृत नीले नभ की ऊंचाई में,

एक और अद्भुत रचना ' बाट जोहते नयन हमारे '

धूल धूसरित कैनवास है
खोई हैं कूचीं सारी

रंग बिरंगे रंग पड़े हैं आतुर

मनमोहक छवि बन जाने को,

संग्रह की कविता ' वजह मुस्कुराने की ' कवि के आशावादी दृष्टिकोण का मुकम्मल बयान है।

गिनोगे तो बाछें खिल जायेंगी

मुड़ कर देखोगे, लगाये हुए पेड़

बाल संवार, बस्ता लटका, पढ़ने जाती अन्नू

और फिर अन्नू की अन्नू,

ये कविताएं सप्रयत्न नहीं हैं, बस हृदय के भाव कविता में रूपांतरित हुए हैं। ये निर्मल जल की धारा की तरह है, जो आत्मा के स्रोत से हृदय सागर की ओर बहती है।

श्री मुनेन्द्र सिंह एक स्नेहिल पिता, आदर्श जीवनसाथी,

यशस्वी शिक्षक, उत्कृष्ट भावशिल्पी, निश्छल मित्र और सच्चे आध्यात्मिक पथिक हैं। मैं उनके उल्लासमय जीवन की कामना करता हूं, मुझे आशा है कि उनकी ये काव्य रचनाएं काव्य प्रेमियों को आनंद और संतोष प्रदान करेंगी यह काव्य संग्रह कविता की दुनिया में एक मील का पत्थर साबित होगा। ऐसा मेरा विश्वास है। अस्तु।

एच एम सिंघल

आभार

मैं धन्यवाद ज्ञापन की शुरुआत करना चाहूंगा अपने सभी शिक्षकों से जिन्होंने अपनी हर शैक्षणिक एवं व्यावहारिक गतिविधियों द्वारा एक उदात्त मानवीय मूल्यों से भरपूर जीवन जीने की प्रेरणा दी, जिसकी झलक इस 'मनुहारी यादें ' में सुधी पाठक अनुभव कर पायेंगे।

मैं भूल नहीं सकता आभार व्यक्त करना अपनी प्यारी पुत्रियों और सुधी दामादों का जिनके मानवीय एवं सामाजिक मूल्यों ने उनके सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्रों में कार्यरत होने के बावजूद भी मेरी अनुभूतियों को कहीं हद तक प्रभावित किया है।

आस्था, धार्मिक विश्वास और इच्छा शक्ति के लिए अपनी जीवन साथी मनोरमा का ऋणी हूं।

कवि हृदय प्रिय मित्रों हरि मोहन सिंघल और अमर सिंह सिसोदिया द्वारा प्रशंसा एवं उत्साह वर्धन इस कविता संग्रह को प्रबुद्ध पाठकों को प्रस्तुत करने का प्रमुख स्रोत है।

मैं आभारी हूं उन सभी सम्बन्धियों एवं मित्रों का, जिनकी पसंद एवं टिप्पणियों ने कविता संग्रह की कल्पना को मूर्त रूप में लाने के लिए प्रेरित किया है।

मुनेन्द्र सिंह

स्वर्गीय पूज्य माता-पिता को समर्पित

अनुक्रमणिका

तगय्युर 1

यादों की फ़ेहरिस्त 3

खुदकिस्मती मेरी या कि बदनसीबी 4

समर यों ही अनवरत चलता रहा.. 6

आकर्षण 8

कितनी ही छबियां 10

बाट जोहते ये नयन हमारे, ओ प्रियतम प्यारे 11

अनहोनी 13

अंतर्द्वंद.. 14

ऐसी होली 15

कोरा कागज़ कोरा नहीं... 16

ऐसा क्या मैंने कर डाला 18

मानस पटल पर खिचे चित्र 20

विराम कहाँ... 21

जड़ नहीं हूँ मैं 22

टीस 24

बेसुध.. 26

लम्हा तब और अब... 27

माँ.. 29

पावस बस स्नेह तुम्हारा 31
अद्भुत है तात तुम्हारा जीवन 33
मगरूरियत 35
संवर्द्धन 36
पीड़ा 38
चलन जो अब ख़त्म हो गए 39
कर ख़ुद से तू व्यवहार अनोंखा 40
यह कैसी प्यास 41
मोह ना बढाओ 43
भटकता मन 44
शक्ति - स्तुति 46
ख़ुश हूं कि मैं हूं, ऐसा मैं सोचता हूं 47
बस यूं ही 49
रावन की कुटिल मुस्कान 50
बैरंग चिट्ठी 52
दबे पांव जो आये 53
और भी हैं राहें 55
निरख अभिसार पथ 56
प्रारब्ध 57
अब ना कुछ भाये 59
तृष्णा तू न गयी मन से 60
बैसाखी पांचें 61
बेशकीमती रत्न बटोर लाता मन 62

आत्म श्लाघा की लौ 63
पर बड़ा हुआ जो दरख़्त भली कर एहसान चुकाये 64
जब भी घर पर नेगी आए 65
धैर्य न खो 66
कोई इसका अर्थ बता दे... 68
कराह 69
वजह मुस्कुराने की.. 70
उद्गार 72
सहर ज़िन्दगी की.. 74
ये पागल उत्कंठा 76
उपसंहार... 78

तगय्युर

वही पेड़, वही पोखर, वही गलियां
वही खेत, वही खलियान I
एक आवारा झुण्ड सा था हम सबका
पर निश्छल प्रेम और सौहार्द्य से परिपूर्ण I
अपने ही में मशगूल न जाने
कब हम बड़े हो गए I
फिर भी पानी पर तैरती टूटे घड़े की गिट्टी
या सबसे सटीक गेंद की वो मार I
तड़ीमार I
खुशियों का एक एहसास I

कुछ अच्छा करने की चाह ने
शहर शहर भटकायाI
हाँ, कुछ पाया,
पर किया बहुत कुछ जाया I
सब सपने हो गये,
जुदा अपने हो गये I
आधुनिकता की चकाचौंध में
कैसे कैसे खेल खेले I
कभी जीत की झूठी ख़ुशी
कभी हार का सच्चा गम I
यह कैसा तगय्युर ?
उदास हुयी प्रकृति और हम रह गए अकेले I

यादों की फ़ेहरिस्त

यादों की फ़ेहरिस्त
मुझे गुमनाम दृश्य दिखाती है I
डूब डूब कर कुछ अतीत के सागर से सहसा
बाहर आता हूँ I
सुकून क्या होता है पशेमां ज़िन्दगी में
अध् डूबी कोई उज्जवल तस्वीर नज़र आती है I
चलो रहने दो आज की ये आपाधापी I
ज़िन्दगी खूबसूरत है !
कल की कल पर छोड़ I
मन में उभरती आज,
कल की वो तस्वीर
दिल खुश करने को काफी है I
यादों की फ़ेहरिस्त
मुझे गुमनाम दृश्य दिखाती है I

खुदकिस्मती मेरी या कि बदनसीबी

झूमे गेहूं की बाली, पसरी सरसों की हरियाली,
काली कोयल कुहुक रही है,
फैली ज्यों ही उगते सूरज की लाली I
मंद पवन, कुसुमित उपवन
कहीं तपन, कहीं घनेरे तरुओं की डाली पर बैठे
कलरव करते विहंगों की सुन्दर आली I
ऐसा खुश किस्मत हूँ मैं
देख रहा हूँ प्रियतम की
हर मतवाली चाल निराली II
अगणित मणियों सी चमक रहीं हैं
तुहिन कानों की सुन्दर टोली I
ज्यों आ बैठी हो अलख सवेरे
खुद में हंसती मुग्धा भोली I
देख देख बौराए अमवा की डाली,
या कि खुले गगन में फैली ढलते सूरज की लाली I
आभार तुम्हारा व्यक्त करूं मैं
हेर हेर करतव तेरे न्यारे I
ऐसा खुश किस्मत हूँ मैं
देख रहा हूँ प्रियतम की
हर मतवाली चाल निराली II
कभी निरीह खड़ा पछताऊं,
आह भरूं बदकिस्मत पर अपनी

देख देख लाचार ताकते
नंगे और उघारे शिशुओं की टोली,
टूट पड़े जब जूठे दोनों की तरकारी को I
ढह रहे हैं कहर कहीं एक अभागन नारी पर,
कहीं कराहते बदन कई, झुलसे बारूदी अंगारों पर I
क्या शिकवा और शिकाया बहुत जरुरी है,
अपनी ये बदनसीबी हाथ जोड़ बतलाने को ?
क्षिति, जल, पावक, गगन, समीरा आज अघाए हैं
तेरे ही अपनों की करनी से I
आग धधकती, धरा तड़पती, कोलाहल से नभ थर्राया है I
जान बचाते फिरते हैं नभचर, थलचर, जलचर
नर ने ही तो हरकाया है I
और कहूँ क्या कितनी ही बातें,
अपनी ये बदनसीबी हाथ जोड़ बतलाने को I
खुशकिस्मती मेरी या की बदनसीबी
ऐ ! मेरे भगवन ढाढस दे अपनाने को I

समर यों ही अनवरत चलता रहा

सबब जो थे ओझल हुए नहीं, न फैसला जीत का,
बदल गए भाव उनके, बदल गए परिमाप सारे I
समर जीतेगा कौन, हैं रूढ़ियों के अवसाद सारे,
अहं का सौम्य से, समर यों ही अनवरत चलता रहा II

कर्म को जन्म से बाँध कर, घोर ज़ुर्म किये उम्र भर,
गर उठा के सर आह भी भरी, कुचल के समूल नष्ट किया I
कर तान सौर गुनाह की, ग़रूर का सिलसिला पाँव पसारे,
समर्थ का असमर्थ से, समर यों ही अनवरत चलता रहा II

दूर तक निगाह में, इश्क की पनाह में, गर मिले परिंदे,
काट कर पंख उनके, तोड़ कर नीड़ ख़्वाबों के,
सुना दिया फ़रमाने खाप, और ऐंठ कर चल दिए I
द्वेष का प्यार से, समर यों ही अनवरत चलता रहा II

अस्तित्व अस्त न हो मेरे गुमान का, नाहक ही पटक दिया,
असवार था पर बुत बना, खौफ ज़दा प्यार किसी का I
जले हुए चिरागों को दी नाहक तूफ़ानों की पेशगी,
रौब का लाचारी से समर यों ही अनवरत चलता रहा I

फिर भी कौन हैं वो ? कौन हिमाकत करे, ज़ुर्रत करे ?
पीढ़ियों से रूढ़ियों का दंभ भरे, शाह बने बुर्ज़ चढ़े I
बिक्षुब्ध कौन? अज्ञानता का भान भरे,
शासकों का शासितों से समर यों ही अनवरत चलता रहा I

आकर्षण

बहुत ही खूबसूरत है ज़िन्दगी ऐ मेरे दोस्त !

दूर कहीं सावन की बौछारों से हरियाई छोटी से अबाध सरकते झरनें,

फिर ठहरे हैं झील तले चुपचाप मचलने I

स्याह काले गेसुओं से घिरे उन्नत ललाट पर,

आ बैठा पूनम चाँद जहां का किस्सा सुनाने I

गगन भेदती टेर पपीहा, पीउ मिलन की आश सवाँरे,

छुप कर ऊँचे गाछों में हर शाम सरे I

कहीं ठिठुरते बच्चे हैं सर्द हवाओं में,

कहीं तपाता हर कोई सूरज अपनी घाम तले I

बिजन हुई सिसक रही है धुर उत्तर की हरित धरा,
कहीं लगा है कुम्भ कोटि- कोटि जन गणनाई में I
दूर देश तक ले जाते पथ,
अगणित पुष्पक तैर रहे हैं विस्तृत नीले नभ की ऊंचाई में I
नाना फूल खिले हैं घाटी घाटी, महक कर आँख दिखाती
हरियाली उड़ती रेगिस्तानी आंधी को I
बाया बनाती घर अपना अरु जूझे तूफानों से,
सुर दुर्लभ नर जीवन अपना अगणित जीव बसाने को I
ऐसे सुन्दर करतव तेरे हे ईश्वर !
क्यों न कोई ललचाये पुनश्च यहाँ पर आने को ?

कितनी ही छबियां

उनींदीं अँखियाँ ढूंड रहीं हैं, ढूंड रहीं है जा केशर क्यारीं I
भोर प्रहर के सच्चे सपने सी, सच्ची छबियां मनुहारीं II
महक तुम्हारी ज्यों, ज्यों सिक्त हुई पङुआ की डेली I
भाव तुम्हारे संग चटकारे, हो ज्यों अमरख चख ली II
चटक टूट गिरती ज्यों चूड़ी, जब कनकी मूंठ सँवारे I
"अजर अमर हो सौभाग्य तुम्हारा" मनिहारिन बैन उचारे II
पड़े सुनाई किलकारी, जब सुदूर पूर्व निकल आये I
शरमाई सी घबराई सी तब अंतर्मन को छक जाए II
जब कौंध रही हो चपल चंचला, स्याह घनी पावस रातों में I
एक एक कर आतीं, कितनीं ही छबियां इन आँखों में II
बंद पलकों में पलतीं कितनीं ही उनकी बातें जैसे I
दिन सन्नाटे में डूबे हैं, रात हुई मस्तानी क्यों ऐसे II

बाट जोहते ये नयन हमारे, ओ प्रियतम प्यारे

निकल क्षितिज से घर पर आओ, ओ प्रियतम प्यारे I

बाट जोहते नयन हमारे, ओ प्रियवर प्रियतम प्यारे II

रे ! अबाध फरकते नयन हमारे I

निशदिन दस्तक देती तेरी बातें

अनायास ही हम उठ कर भागें

ये कैसा उन्माद तुम्हारा

बहुत जरूरी मिलन हमारा,

उलाहनों को अब तो त्यागो

आज सुलह के सपन जगा दो

आश अधूरी प्यास जगाये

काश न तू यूँ ही भरमाये

निकल क्षितिज से घर पर आओ, ओ प्रियतम प्यारे I

बाट जोहते नयन हमारे, ओ प्रियवर प्रियतम प्यारे II

बिखरी रेतों की ढ़ेरी,
नाना अवयव,
आधार शिला उत्तुंग शिखर,
गढ़ आकार अभी ना पाए हैं I
काम अधूरे नाम अधूरे
परिपूर्ण करें जो जीवन पथ
होनें हैं जो चारों धाम अधूरे I
पूरब से पुरवा, पश्चिम से पछुआ
आकर कब की चली गयीं,
आर्द्र हुए आगन की तुलसी भी
अब अलसाई है I
निकल क्षितिज से घर पर आओ, ओ प्रियतम प्यारे I
बाट जोहते नयन हमारे, ओ प्रियवर प्रियतम प्यारे II
धुल धूसरित कैनवास है
खोईं हैं कूंची सारी
रंग बिरंगे रंग पड़े हैं आतुर
मनमोहक छबि बन जाने को I
आतुर मन खोज रहा है
प्रारूप तुम्हारे, आगारों में
फिसल न जाएँ रेत सरीखे ये पल
निःशक्त हुए इन हाथों से I
निकल क्षितिज से घर पर आओ, ओ प्रियतम प्यारे I
बाट जोहते नयन हमारे, ओ प्रियवर प्रियतम प्यारे II

अनहोनी

जड़ नहीं, बुत बना खड़ा हूँ
मैं हालातों का मारा II
ज़ेहन आप्लावित है पीड़ा से,
रोम रोम सिहरन है जिव्हा को कारा II
कल तक जो प्रासंगिक था,
आज हुआ है अर्थहीन II
साकार ब्रह्म है जिसकी थाती,
कैसे मानूं, है और नहीं भी II
उथले मानस में तिरतीं
सदियों की परिपाटी II
टूट रहा है दंभ घ्रणित हुईं हवाओं से,
कलुषित वाणी से,
ज़हर घुली फिजाओं से II
कृत्रिम प्रज्ञा ने लावण्या मार रचीं हैं
विषाक्त हृदय की लोलुप रचनाएँ II
और जिया नहिं जाता उस ओर
जहाँ से आयीं थीं जिज्ञासाएं II
काँप रहे हैं पाँव देख कर अनहोनी,
चुक गई है शक्ति सारी,
अब कैसे सह पायें ?

अंतर्द्वंद

सह रहा हूँ हर शब्द,
ज्यों शर बुझे अनल में, पर पीड़ा है भारी I
छिटक रही है मंशा उनकी,
ज्यों बांसों के झुरमुट की चिंगारी II
दावानल बन जला रहीं हैं वे
स्वर्णिम सपनों के साकू गाछों को I
कहीं कराहती कोयल कूके,
कहीं रुंधे गले से टेर लगाती मुनियाँ माँ को II
तार तार हो रहे हैं ताने बाने
सभी समाज के असभ्य, अकथ्य, अप्रिय अफसानों से I
टूट रही है "अतिथि देवो भव" की परिपाटी
कुछ अपनों में ही गद्दारों के विषाक्त हुए अरमानों से II
अजीब अंतर्द्वंद निगल रहा है
सब सुख श्रोतों, मृदुल खुशियों की फुलवारी I
अभीप्सित जीवन की चौखट पर
सोच समझकर चली हर चाल खुद से है हारी II

ऐसी होली

आओ मिल बैठें, करें हंसी ठिठोली,
मनुहारी कृतियों का इज़हार करें
तरह तरह के मीठे पकवानों से,
बतकहियों में और घनेरी मिठास भरें II
बतरस घोलें, सब रंग घोलें,
निज मन, पर मन खुशियों से निष्णात करें I
हे ईश्वर ! सुरभित रंगों की वर्षा से,
सिंचित हर घर आँगन कर दे I
चिर परिचित मुस्कान ठहर,
हर अवसाद, आल्हादित हर मन कर दे II
हो आज रंगीली होली ऐसी,
राग, द्वेष, मद, मत्सर
हर मन से हर दे II
करता जो उपहास
देख फलक पर फैली पर जन की आभा I
श्रम हीन, रिक्त वह
श्री हरी की नैसर्गिक सच्चाई से जो भागा II
विमूढ़ हुआ जो तर्कहीन अरु शूलों से संवाद है कहता,
कर दे शीतल उस मन को जो व्यर्थ जलन की पीड़ा सहता I
ओ ! होली के रंगों आज समय है दिखला दो अपनी आन,
मानव में मानवता भर दो, लौटा दो उसकी शान II
हो इंद्रधनुषी रंगों सी ऐसी होली, हंस हंस कर बल पड़ जाएँ I
भेद मिटें सिगरे मन के, मन व्योम झाकें तारावलि, बस यूँ ही इठलायें II

कोरा कागज़ कोरा नहीं

मत कहना " मेरा जीवन कोरा कागज़ ",
उभर आयेंगे दिलकश अफ़साने
जीवन के कोरे कागज़ पर
ज़रा दिल से फ़लक ज़िन्दंगी से
स्याह पर्दों को हटा के तो देखो I

सुनाई पड़ेंगीं कुछ खट्टी मीठी बातें,
बतरस में पगीं सुनसान गलियों की रातें,
दिखेंगीं झिलमिल सितारों की रातें,
रातों में छुपते छुपाते सायों को देखोI

तुहिन कणों में अक्श हैं निखरे,
ज्यों अवनी पर बहु माणिक बिखरे,
सुर्ख सहर की कोमल बाहें,
आलिंघन का आह्वान देखो I

चचल हुई पछुआ का नर्तन,
ओढ़े मेघों का काला आँचल,
दिल की धड.कन धुकधुक करती,
चपल चंचला पागल देखो I

टेर लगाते पंछी प्यारे,
पोखर की फूली जलकुम्भी,
जामुन की टहनीं पर बैठे
ये बचपन के साये देखो I

इधर को देखो, उधर को देखो
देखो उसके चहुँ ओर नज़ारे,
जीवन की नैसर्गिक आभा
बहुतेरे करतव प्यारे देखो I

ऐसा क्या मैंने कर डाला

हर सत कर्म किया वो, जो सभी को लगा भला
ऐसा क्या मैंने कर डाला, पतझड़ मेरे साथ चला II
संज्ञान नहीं है वो फेहरिस्त, तल्ख़ ना फ़रमानी की
कोंपलों सी ताजगी पुनश्च, सब्ज़ आगवानी की II
पार दहलीज़ पाँव पसारे, मलयज पवन हमराज बनी
कलरव करते खग मृग बैठे, शीतल छैयां पाय घनी II
गाछ भरे जब शाखों से, शाख सजीं जब कलियों से
हर हार गले श्रृंगार सजे, मदहोशी तब अलियों से II
मौसम मार सही मैंने, जनु तेरी ही खुशियों खातिर
बालक बिफ़रे, सज्जन बैठे, बैठ गए कईयों शातिर II

न आह भरी तब भी मैंने, न दिल से उनका प्रतिकार किया
मिल बतरस घोले, हास ठिठोली, हंस सबका सत्कार किया II
नियति यही है, कब शास्वत हमनें इसको माना है
देख के अपनी भंगुर काय, सत्य यही है जाना है II

मानस पटल पर खिचे चित्र

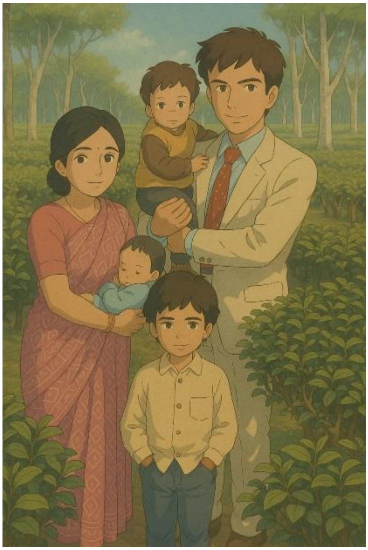

सुरखाव रंगों के चश्में फूटे, नयन मूँद जब चित्रावली खोली I
प्रगट हुई भोली सी सूरत, कुंतल काले, गोल कपोल तोतली बोली II
पीर हरी है सारी उसने, स्मित ज्यों लेपा चन्दन, अक्षत, रोली I
कद आल्हादित हो मन करतव करता, अरु बेसुध हो हास ठिठोली II
खुले द्वार तू बाहर आकर, इतराकर सबको ऐसा भरमायेI
हाथ खोलकर, काम छोड़ कर, सब तेरे पीछे पीछे आये II
हवा सहर करती अठखेली, उड़े तितली सा जब तू चंचल I
श्रम स्वेद मणि जड़ित, हुलसित माँ का भर जाता खुशियों से आँचल II
कब नटखटपन छोड़ दिया, दिया काम को नाम I
अंतिम प्रहर में सूने घर में, ढूंढ रहा मन, मूँद आँख दिल थाम II

विराम कहाँ

गति इस ब्रह्माण्ड की है नियति पुरजोर माना सबने I
जीवन जीवंत हुआ है इससे, ऐसा राज जाना हमने II
बेकल हो ठहर गए कहीं, हम तो भान नहीं है क्या होगा I
दम भरकर दौड़ रहे हैं, बोलो और कहाँ तक जाना होगा II
कितने और पड़ेंगे मील के पत्थर, स्याह लिखे अंकों वाले I
ऊबड़ खाबड़ पगडंडी पर कितने और पड़ेंगे पग छाले II
अंतहीन हैं फिर भी, कितने ही अनलौक हुए हैं ताले I
जैसे मोहपास की डोर बंधा, चखता हो मधु के प्याले II
बड़े जतन करम मिये सब, बंधन नौ दो ग्यारह कर डाले I
पर विराम कहाँ है ?सच बतला दे ओ दुनिया के रखवाले II

जड़ नहीं हूँ मैं

जड़ नहीं हूँ मैं, महसूस किया है मैंने
माँ का प्यार भरा पहला चुम्बन,
जब उसने मुझे उठा
आँखों में आँखें डाली थीं,
कह गयी थी कितनी सारी बातें I
परिजनों के तानें,
उनके बहाने,
खुद की हसरत I
प्रथम मिलन पर ही
एहसास हुआ माँ
तुम्हारी सघन वेदना का,
जो तुमने सही होगी चुप चुप छुप छुप,
सुबक सुबक कटीं होंगीं रातें I
बचपन भी नहीं था नासमझी का,
सार्वभौम मुफ़लिसीमें तेरा गूढ़ ज्ञान,
गोबर से लिपे आँगन में पहुंची धुप का निशान
क़रीने से बांधे अचार संग परोंठे,
चबूतरे पर पसरी सांझ की लाली
सुर्ख आँखों से निहारती तू
महसूस करूँ मैं
तेरे हुलसते मन की बातें I
जड़ नहीं हूँ मैं, जड़ें बहुत गहरीं हैं,

है एहसास मुझे,
कांपते हाथों से रचना,
छिटक के तंदुल माथे
चूमा हांथों को मेरे,
सिक्त हुए हांथों की मुट्ठी
छोड़ कर तुझको जाना,
यादों का सैलाब I
जड़ नहीं हूँ मैं, महसूस किया है मैंने I

टीस

बिन आग यहाँ पर
दावानल सी जलतीं
अज्ञान तिमिर में अनबूझी उत्कंठायें I
कैसे तुम्हें दिखाएँ, भगवन ?
जले हृदय पर पसरी आघातों की सूरत,
ज्यों टूटे तारों की फूटी मणिकायें I
सिहर उठेंगीं रूहें,
होगा विचलित मन,
कैसे आहत मन की बातें तुन्हें सुनाएँ I
गूँज रही कानों में छद्म जनों की कर्कश बोली,
मुखर हुए सियार यहाँ, कैसे जी भरमायें ?
बहुत सुनहरी धुप यहाँ,
पर चम्पा के गाछों के नीचे
स्वानों ने डेरा डाला है I
काफ़ूर हुई हैं प्रेम ऋचाएं, कैसे ये बतलायें ?
वृथा रुदन है,
मौन सदन है
आड़ी तिरछी चालों पर भौंचक
मूढ़ हुए हम कैसे ना झुंझलायें ?

क्यों आते हैं याद रुपहले
दिन बचपन के,
क्यों बेअदबी बहुत रुलाती है ?
बदले हैं आयामों के दिन
कैसे हम खुद को समझाएं ?

बेसुध

प्रियवर तुम कब आये ?
संवार रही मैं पगली घर आँगन
बुहार रही पंथ बिछावन I
रख छोड़े चुन चुन
सब अवयव ठौर ठिकाने I
क्या पकड़ूं, क्या छोड़ूं
बहुतेरीं हैं उनकी प्रिय I
चलो आज फिर उर अंतस्तल झांकूं I
अहा ! बड़े चितेरे हो तुम प्रियवर,
यहाँ कहाँ बैठे हो रिसियाये ?
भरि अंखियों में
छवि मनुहारी
दुइ बांह गहे
मन हारी
मुग्धा प्यारी I

लम्हा तब और अब

परत दर परत जब
जीवन पटल कुरेद कर देखा I
मिला एक लम्हा खिलखिलाता,
प्यार से संजोया हुआ I
कह रहा है अठखेलियों के किस्से,
किस्से घर के, घर द्वार के,
बड़े जतन से बांधी बाड़ के,
टूटे तार के I
निकल पुरवा संग बहते पंछी मानिद,
कभी
वीथियों में रूठे यार के I
पत्थरों की सिल पर उकेर कर देखीं
खय्याम की रुबाइयाँ,
पर
हर बार उभरते नाना अक्स,
सिक्त रेत से बड़े जतन बनाए घर,
आँख मिचौली के लिए
पुआल के ढेर में बनाई खोह,
और फिर
सकपकाए से दौड़ कर टकराना,
गिरना, उठ भागना I
आज

आह भरकर बैठ यों ही
अंतस्तल पर बिखेर दिए
हर रस्मों के बेजान बुत I
उफ़
ये क्या समय है ?
ऐ मेरे परवरदिगार I
दिखते तो हैं इंसान से,
पर नीरस, निर्लज्ज I
तार तार करते
बेतार प्रेषित हुईं सब आकृतियाँ
सुसंस्कृति ?
रस्म अदायगी में भी
बहसीपन की पराकाष्ठा I
गर जीवंत रूप ?
तो फिर क्या होगा ?

माँ

रुदन बहुतेरा
तभी तो जिया I
लगा गले
प्यार से सहलाना तेरा
निहार कर प्रिय की ही प्यारी छबि
निसार हुई जब
दुरूह दुलार का सहस्त्र बार
रीता किया आगार I
माँ !
प्रस्फुटित बोलों में मिसरी सी चख
मेरी वाणी,
मन ही मन नर्तन करती,
तेरा गद्गद, आल्हादित होना I
नहीं, याद है मुझे I
माँ !
संबंधों की परिभाषाएं,
अरु परिभाषाओं के शब्दों को
तरह तरह से कोमल मन में
संप्रेषित कर
किये परिधि विस्तार I
खुले द्वार, फिर भी
ना जाने कितने ही आवृतों में घेर लिया I

माँ !

पठन चितेरा,

मनन घनेरा I

सांझ हुई

बना जेवण

बाट जोहते आतुर तोरे

उन दो नैनों के ऊपर रख हाथ

क्षितिज़ में तू झांके I

उफ़

कैसे मैं जानूं ?

तेरे व्याकुल मन की पीड़ा I

पावस बस स्नेह तुम्हारा

पावस बस स्नेह तुम्हारा जीवन की सबसे अच्छी सौगातें I
उष्ण हुई वसुधा अरु विदग्ध ह्रदय को भातीं ये बातें II
रवि तपन, ज्येष्ठ माह सातों तुरंग रथ अति वेग से भागें I
पथिक, परेवा, झुलसे पात, निर्मल गात, शीतल जल मांगें II
न निशा सिरानी, उनींदी अरुणाई, जलते सूरज की अगुआई I
दिन गिन गिन कटे, नेह बिन आषाढ, अनल सी झुलसाई II
पलक उघार टकटकी लगाए, नयन हेर रहे हैं तेरी ही राहें I
ऐ पावस के बादल, आ झूम जरा, फैला दे तू अपनी बाहें II
आगोस तेरे में खो जाऊं, खो जाऊं प्यार के झंझावातों में I

पावस गीत तुम्हारे, फिर फिर गाऊं इन बेदखली रातों में II
अरुण आभ के गहने पहने, फाओं सी तेरी कोमल काया I
पवन झकोरे वेग बढाते, फिर क्यों शर्माते मेरे सरमाया II
चहक पडूँगी, किलक पडूँगी, पुलकित होगा मेरा गात I
उमड़ घुमड़ कर जब वरसोगे, ओ पावस मेघा सारी रात II

अद्भुत है तात तुम्हारा जीवन

ओ पापा तुम तो ऐसे न थे I
आँख खुली जब,
तेरी बाँहों के झूले में खुद को पया I
मुस्कुराई थी मैं, तुम्हें क्या पता
कितनी धन्य हुई थी मैं I
आँखों में आखें दाल शुक्रिया अदा किया था मैंने I
बिन बोले बिन डोले I
घुटनों के बल चल जब भी चोट लगी,
क्षण में काफ़ूर हुई जब जब फू फू किया,
तुमनें अपनी स्नेहिल हथेली से छुआ I
चट, फिर चल पड़ती थीI
पता नहीं कितनी बार चीटियों को मारा
ये बताने को जैसे दोष उनका मेरा नहीं I
और सच में
मैं खिलखिलाकर दौड़ पड़ती थी I
तेरी ही पनाह में बिन सोचे, बिन समझे I
प्याली टूटने पर चुपके से तेरी गोद में छुप जाना,
माँ के डांटने पर रोना, तुम्हें देख मंद मंद मुस्कुराना I
याद है मुझे थैंक यू नहीं बोली थी मैं I
कब बड़ी हो गई, कि तुम ने गोद उठाना छोड़ दिया I
बिन कहे ही जानी मेरी अभिलाषा,
हंस कर माँ की ओर मोड़ दिया I

कितना बोझ उठाया तुमने,
समझ आतीं वो बातें I
राह पकड़ जब जीवन गृहस्थ बसाया,
मन ही मन तुम हर्षाये, कहतीं ऐल्बम्ब की सारी तस्वीरें I
यों चुपचाप निकल जाओगे, ओ पापा तुम तो ऐसे न थे I
(कोरोना काल में पिता को खोने पर एक व्यथित पुत्री)

मगरूरियत

ख़म खा गई है खामखाँ हर उनकी सीधी चाल
जब से मगरूर हुए है वो लदकर तरुणाई से
समझ रहे हैं हर किसी को खस्ताहाल I
पशेमा ज़िन्दगी में भी नशा मादक तरुणाई का
बहक कर हर कदम पड़ता है लड़खड़ा के
करने को मोहब्बत बेहाल I
मरहूम हुए फिलहाल खुदी से खुद के करम
न खबर अब किसी रहगुजर की
न ही पा रहा है राह, और उलझता जाल I
कुबेर का साथ, जैसे कैटलिस्ट I
पकड़ गया है रफ़्तार उनका बहकना,
अब उन्हें सूझ नहीं आता रिश्तों का बिगड़ना I
मुफ़लिसी के दौर में
तुच्छ प्रयासों से संबंधों की भरपाई
जैसे बेबस बेहाल I
इतना मगरूर होना भी क्या लाज़मी था ?
क्यों संदेह के घेरे में हैं तेरे ये माटी के ये पुतले,
बुत बने से देखते हैं कल्थन,
आह हुई काफ़ूर
नज़र चुराते बहरहाल I

संवर्द्धन

संभाव्य संवर्द्धन, हो प्रस्फुटन
जब भरपूर उर्वरा माटी में I
उस पर हो द्रुत निष्णात करों में,
खिलती मानवता परिपाटी में II
कलरव करते, बौराए अमवा की शाखों पर,
शुग्गा के प्यार भरे निवाले I
नेह सींचती माता भोरी, अंकुर आँख सुहावन,
झट पंखों को फैला ले II
तपती धरती को जैसे कन्नौजी खुशबू
दे जाती पहली बदरी प्यारी I
आँख मिचौली खेल रही ज्यों
शीशे की हिलतीं लड़ियाँ न्यारीं II
चौखट पर मुग्धा के चेहरे की झलकी
जस धूप उतरती शाखों पर आ ओस कणों को चमकाए I
निरख पालने में शिशु का क्रंदन
स्निग्ध हुई ममता बहकावे की लोरी गाये II
शाकुन्तल हुआ संवर्धित
व्योम में फैली अरुणिम लड़ियां I
नैसर्गिक, बेजोड़ प्रतिवेश पिरोईं
दैदीप्य गुणों की मणियां II

हृदय भेदती सम्प्रति
प्रचुरता आविष्कारों की I
हो कैसे स्वीकार्य परिवरिस
नागफनियों बिच बढ़ते आकारों की II

पीड़ा

पीड़ा उस चोट की
जो अनजानों से मिली I
यह कहकर सह गया
कोई बात नहीं, वो मुझे कुछ भी जानते नहीं II
पीड़ा उस चोट की
जो अपनों से मिली
कुछ सहम कर सह गया I
कोई बात नहीं, वो मुझे पराया भी मानते नहीं II
पीड़ा उस चोट की
जो खुद से मिली I
आह भर कर सह गया
कालिदास कह कर रह गया II
सोचता हूँ उभर जाऊँगा
अन्धकार में था I
पंथ प्रकाशित पाऊंगा
माँ वीणा की झंकार सुनाई देती है II
जब भी इक पल ठहर
सहर में तेरे मंदिर आता हूँ I
सह जाता हूँ सारी पीड़ा
आशीष तुम्हारा पाता हूं II

चलन जो अब ख़त्म हो गए

चलन जो अब ख़त्म हो गए
कैसे कैसे बीज बो गए I
हर बड़े कश्मकश
अपने चलन की दुहाई दे सो गए II
अदब था या कुछ और,
सहज भी न किया गौर I
ठौर ठौर अनुशासन के अंकुश
फिर भी खुश II
काफ़ूर हुई लज्जा शरमाई सी
वनजा अब इठलाती है I
नवयुग ऐसा होता है
कह दुहिता हरकाती है II
फ़ुरसत नहीं तुम्हें हम समझें,
हमें समझ कर लेना तुम I
आज़ाद हुए हम चलन हमारा
अपनी मत चलाना तुम II
हाथ मलोगे,
कुछ ना कर पाओगे I
किंकर्तव्यविमूढ़ से हो,
अरे अरे कह पछताओगे II
हाँ, चलन जो ख़त्म हो गए
बदचलन के साये में II

कर ख़ुद से तू व्यवहार अनोंखा

बाहर क्या खोज रहा तू बन्दे, मणियाँ उर अंतर में देख रे I
चंचल चिक चट डार दृगों पर, सुन्दर भाग लिखा तू पेख रे II
कुछ ही क्षण सब धुंधला होता, गहरा सत्य यही तू जान I
कर यत्न यहाँ, पा रत्न यहाँ प्रकाश उन्हीं का अब तू मान II
सज जाता जीवन उनका, जिसने मोहपाश के बंधन तोड़े I
दूर हुए पग बाधा कंटक, ज्येष्ठ गगन जब वारिधि ओढ़े II
छन्न हुई गिर बूँद, खो अस्तित्व, मिला ज्यों शिव सिल के द्वारे I
त्याग दिए सब छद्म धरोहर, मिलन हरि से दिल तिल तिल हारे II
कर खुद से तू व्यवहार अनोंखा, भटक मत अब द्वारे द्वारे I
पा कर सुर सुकून मिलेगा, अद्भुत स्वर्णिम क्षण होंगे प्यारे II

यह कैसी प्यास

पशोपेश में ढूंढ रहे हैं जिसकी जिन्हें तलास
कभी क्षुब्द, कभी रुष्ट, कभी अनायास ही
करते अट्टहास I
पा जाने की ख़ुशी क्षणिक,
ऐ मेरे मालिक !
लोलुप हो, और मिले
बड़े धन, यश, गौरव
कर लेता खुद को
बेहाल I
कभी उलझता, कभी सुलगता
सुध बुध खोता खुद का गात I
फिर लुटा धनिक,
ऐ मेरे मालिक !
यायावर रे मानव !
थाम जरा चंचल मन को
अगणित हैं ना पाईं खुशियाँ I
शास्वत प्रश्न
यह कैसी प्यास ?
याचक मुझको मान तनिक,
ऐ मेरे मालिक !
यत्न गहन, गहन है ज्ञान
मर्मज्ञ धरा के

उत्तर ऐसा आने दो I
अनहद नाद उरों में उतरे,
उतर प्यास बुझाने दो I
जिज्ञासु मन इक,
ऐ मेरे मालिक!

मोह ना बढाओ

पिता तुम धन्य, गज़ब पुरोधा, समझ तुम्हें कब हम पाये ।
शालीन, संयम के आगार, सुदृढ़ अनुशासन के बने बनाये ।।
निशदिन अथक परिश्रम, मितव्ययी बन, प्रिय तात अनूठे।
करने को संतति संवर्द्धन, तोड़ दिए सब बन्धन नाते झूठे ।।
चुपचाप सहे प्रहार विपुल, ढाल बने, बने तुम सघन वितान ।
पिता तुम पुण्य फल हो, आशीष, विगत जन्म सुकर्म महान।।
सुदृढ़ बांहों के झूले, कांधों पर असवार हुए जब बिन सोचे ।
उर अन्तर में लुप्त स्मित प्यारी, स्नेह तुम्हारा अब हम बांचे ।।
घर किसे कहते हैं? प्रवास हेतु कर विचार सब जाना हमने ।
जाना बाट जोहती आंखों में लखि, बनते औ बिगड़ते सपने।।
उम्र बढ़ी, हम राह चुनी, जब रोगों ने आ कर तुम को घेरा ।
कृश हुयी काया, बोले तुम, मोह ना बढ़ाओ है यह पग फेरा।।

भटकता मन

यक्ष प्रश्न_ जीवन में सबसे तेज भागता कौन?
' मन ' बोले विनम्र युधिष्ठिर तोड़ कर मौन।
सहज समझ न आया
गूढ़ रहस्य है ये माया।
नाना भांति सुनी जब
चर्चा सगुन उपासक की ।
क्या होता है निरगुन ?
ये कैसी आख्या ?
धरम धुरंधर भेष बनायें।
हम पछताएं ।
उठकर चले चुपचाप वहां से।
तोड़ आडम्बर की छाया ।
मन मेरे में आये
क्या मैं निरगुन ?
उबटन, चन्दन, माला, रोली
आंख मिचौली।
भटकता दर दर
दिव्य प्रकाश तेरा पाने को
सुध-बुध खो ली।
प्रभु मेरे
क्या मैं निरगुन ?
निरख, परख सब पण्डालों को

भटकता मन चुप हो जाता,
चल घोंघे की चाल,
सुबक सुबक कुछ ना कह पाता।
हे हंस वाहिनी करो कल्यान,
देकर मुझको ज्ञान।

शक्ति - स्तुति

अति उत्तम शुभ मंगल कारी, पुनि आये दिन नवदुर्गा वारी।
चित्र लिखीं शुभ मूरत मन में, जतन करत होंऊं बलिहारी ।।

विनम्र भाव मैय्या आंगन बुहारू, अभिषेक करूं कर जोरी।
चंदन रोली पुष्प भरि झोली, अति उल्लास है स्तुति तोरी।।

राउर रूप नाना भांति संवारूं, खड़ग दामिनि सी दमकै।
माणिक मोती जड़े मुकुट में, अतिसुंदर नासा बेसर झलकै ।।

केहरि वाहन तव तेज समान, विपुल सम्पदा आशीष घनेरो।
दरबार भरो तोहरे गण सों, मइया तू दाता हों याचक तेरो।।

ख़ुश हूं कि मैं हूं,
ऐसा मैं सोचता हूं

आंख खुलते ही
मुस्कुराती मां ने उठाया
चूमा माथा और फिर गले से लगाया
दुआऐं की, बलइयां लीं, आंखों में आंखें डाल
कहा 'जियो हज़ारों साल '
ख़ुश हूं कि मैं हूं, ऐसा मैं सोचता हूं।
'अपरंच समाचार है कि '
जब खत से पढ़कर सुनाया
आशा की किरण मां के चेहरे पै देख
बहुत भाया
मन ही मन उसका मुस्कुराना।
ख़ुश हूं कि मैं हूं, ऐसा मैं सोचता हूं।
याद नहीं कब तक सजाया संवारा
लगाके नज़रोंना पढ़ने पहुंचाया
छूते पांव स्वजनों के देख
मन ही मन हुलसायी, समझ गयी कि
लाल फिर अब्बल आया
ख़ुश हूं कि मैं हूं, ऐसा मैं सोचता हूं।
तिरती आंखों में सपनें
सपनें सुन्दर, हों साकार सलोनें

परमार्जित भाषा में कह न पाये मगर
सात समंदर पार के किस्से सुनाये
तो समझ जाता हूं मैं
'ओहदा कुछ बड़ा हो ' तमन्ना है उसकी
ख़ुश हूं कि मैं हूं, ऐसा मैं सोचता हूं।
जला के दीपक सोया नहीं रातें
'बातों से महल भी कहीं बनते '
तीर सी चुभतीं थीं कइयों की बातें
'मेहनत कर, धीरज धर' कहा था मां ने
उसी का फल है ये दुनिया जानें
ख़ुश हूं कि मैं हूं, ऐसा मैं सोचता हूं।
करूं मैं याद तुझे शब्दों की कतारों में
भावों में लिपट श्रद्धा सुमन मैं चढ़ाऊं
दूर जग हंसाई से रहूं, कसम ऐसी खाऊं
तेरा जाया हूं मां, गर्व है मुझे।
ख़ुश हूं कि मैं हूं, ऐसा मैं सोचता हूं।

बस यूं ही

बस यूं ही उस रोज जो पकड़ हाथ की उंगली मां पहला कदम बढ़ाया।
कितने ही सपने संजोए थे तुमने जब गिर गिरकर उठना सिखाया।।
कांधे पे बिठा गुरु दुआरे जब लायी, तूने रहस्यमय जीवन गीत सुनाया ।
ज्ञानपुंज शब्दशक्तियां जेहन उतारूं, तुम्हीं ने हंस कर पाठ पढ़ाया।।
बस यूं ही बढ़ चला सफ़र तेरी सीखों के सहारे, रस्ता हुआ गुलजार ।
कितने ही मुकाम आये नज़र में, रुकना नहीं कह भ्रमों को कर दिया बेजार ।।
यौवन दी दस्तक, बढ़ी प्यार की पीगें, बदन भरे आम सा गदराया ।
अरे ! फलक पे सितारों से गुफ्तगू में बहका आफताब सा शरमाया ।।
मन्द मन्द मुस्कान हवा में, कंगूरे बैठाये, आंगन लीपा, द्वार सजाई रंगोली ।
मौसा - मौसी, फूफी - फूफा, बड़की बिटिया, आयीं जाने पहचानों की टोली
।।
सबल समय का पहिया घूमा, घूमा सबल ग्रहों का फेर।
मुकुर झांक जब सूरत देखी, औचक लिया सत्य को हेर।।
वंशानुक्रम के अंकुर देखे, देखी श्वेत लटा कुंतल केशों वाली। बनते और
बिगड़ते चेहरे अज़ब चाल जीवन की मतवाली ।।
आर्चिव फाइलें देख बस यूं ही सोच रहा हूं, काश कि कुछ कर पाता ।
स्वर्णिम जीवन की गोधूली में निरख नंदिनी, दिलीप सरीका मुस्काता ।।

रावन की कुटिल मुस्कान

हे! धनुर्धर राम, तुम इतने सशक्त महान, फिर क्यों मौन खड़े हो।
लखि बेअनुमान अजब पतन की भान, फिर क्यों खुद को गौन करे हो।
इक्ष्वाकवंशियों की यशगाथा शास्वत रखनें की जब चाह बढ़ी।
रख तपस्वी का भेष चले तुम, कला युद्ध अजब परवान चढ़ी।।
निर्भीक निडर हो हन्ते व्यभिचारी, कुशल शर चाप धरे हो।
हे धनुर्धर राम तुम इतने सशक्त महान, फिर क्यों मौन खड़े हो।।
मारा कुलघातक बाली, अधम निरे खर दूषण बलशाली।
कामान्ध मायावी कितने ही नर पिशाच स्व पौरुष से किये तमाम।
पर वही तो आज हो रहा है अविराम, मचा है चहुं ओर दर्द भरा कोहराम ।।
लक्ष्मण जैसा तात, देता निडर तुम्हारा साथ, क्यों हो गये हो आम।

हे धनुर्धर राम तुम इतने सशक्त महान, फिर क्यों मौन खड़े हो ।।
पुलस्त्य कुल घालक, असुरों का पालक, कर बैठा पातक अति भारी ।
नहीं जानता था वह, शर का ताप, न बूझे वह सीता न्यारी ।।
तब ध्वस्त किये मनसूबे सिगरे, पस्त हुए नाना अरि भट हाहा कारी।
श्रीहीन हुयी श्री लंका, किये तुम प्राणविहीन असुर तमाम ।।
हे धनुर्धर राम, देख नव रावन की कुटिल मुस्कान, फिर क्यों मौन खड़े हो।।

बैरंग चिट्ठी

सुन देश से बैरंग चिट्ठी की, मुग्धा दौड़ी-दौड़ी आई दुआरे।
शंकित मन ख़ुद से पूंछे, कित्ते दिन बीते मइया काग बिड़ारे ।।
खूंट की गांठ खोल, घूंघट संवार, झट आभारिन अधन्नी दी पकराय।
अनायास ही मन मुसकाय, दी आशीष, डाकिया बढ़े तुम्हारी आय ।।
बांचे खत, गात रोमांचित, गली कूचों की छवि नैनों में भरि आई।
पुलकित मन कछु शकुचाय, करे शिकायत, पूंछे मइया सों कुशलाई ।।
'अत्र कुशलम् तत्रास्तु' परे है पुनश्च पुरानी उम्मीदों की बातें।
'शुभ सन्देशा'कबहिं मिलेगा, व्याकुल मन, कटतीं नहिं रातें।।
उफ्फ करी, आह भरी, कछु कहन न पायी विरहा की मारी।
साथ पिया का होवे कैसे, घर की उलझन, सीमा की तैयारी।।
ढूंढ़ रही है खत में मन बतियां, उर के कैनवास पर सौहर के वादे।
भांप गये सब सगे कुटुम्बी, दुल्हन की मनसा, नयनों में सपने सादे।।
बोझिल मन, पर अपनापन, घर की सबला, उर से लियो लगाय।
भिजवाई फिर बैरंग चिट्ठी, कह मन की बतियां, ढांढस दियो बंधाय ।।

दबे पांव जो आये

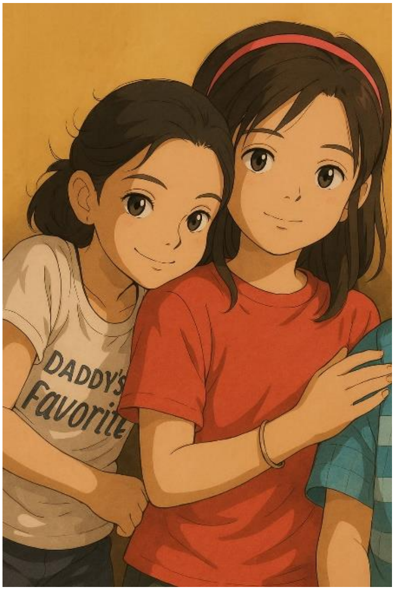

धड़कने हुईं तेज़, भौंह तनीं, सौंह करी, कछु रिसयाये।
जब दबे पांव जोर से, 'कू ' कान में कह डरपाये ।।
पल भर में जुटे सब, कुछ ना नुकुर, कुछ राय प्रबर।
उड़ चले ज्यों जिग़री परिंदे, करने को करतब ज़बर ।।
सावन की सांझ के आवारा बादलों की मानिंद मंडराते।
कोई शेर सा दहाड़ रहा, कोई चपला सा छुप धमकाते।।
छुपा छुपी खेल निराला, जानीं पहंचानी खोहों में पसर ।
अल्हड़पन की नव अठखेलीं, अज्ञातवास में हुयीं मुखर।।
किशोर वय के प्रतिवेदन पर समय की टीका इठलाती ।

दबे पांव मन स्पन्दन, क्रीड़ा_क्रन्दन छवि सुंदर इतराती ।।
भूली बिसरी यादों के अब मधुर, विदग्ध से बिखरे बहु साये ।
टूटे भ्रम को जोड़ें और सराहें, अविचल दबे पांव जो आये।।
नन्हीं मीकू 'कू' कर डरपाये, पर आज गज़ब की खामोशी।
बदल गये खेल निराले, परिवर्तन की हवा कराती नामोसी ।।

और भी हैं राहें

और भी हैं राहें, कदम बढ़ा के देख क्षितिज में,
आह्वाहन करते स्वर्णिम सरमाये हैं।
इतने अनजान न थे जो जान न पायें रहगुजर के वहम।
रैन बिताई, भोर भई, बस अब छोड़ दे तू ये नीड़ ए हरम ।।
नींद उनींदी, पहर तीसरा, अलसाई सहर का रवि संदेशा आगे ।
चल, उठ, पकड़ राह कोई अनजानी, तोड़ मोह मोह के धागे ।।
मुड़ मुड़ देखा पीछे, बेसुध, ठहरा, बेबस एक सहारा ।
जज़्बात दबाये, अश्रु बहाये, चौथेपन में इक बेचारा ।।
देखे सपने, दर्द छुपाये, जब जब रुक रुक क़दम बढ़ाए ।
ज्यों ओझल नीलगगन में, कट कट पतंग यों ही लहराये ।।
कर सन्तोष अगर तू बैठा, पहुंच न पायेगा तू मनचाही मंजिल ।
छल कपट, राग द्वेष परिपूरित इस दुनियां में पग पग हैं कातिल।।
युगातीत हो जाते हैं कर्मठ, दूर दृष्टि, प्रण प्रबल के जो जाये हैं ।
और भी हैं राहें, कदम बढ़ा के देख क्षितिज में, आह्वाहन
करते ये स्वर्णिम सरमाये हैं।।

निरख अभिसार पथ

निरख अभिसार पथ, तू प्रेम गीत गा पायेगा।
जो न जाना कभी, चल कर वहां तू पायेगा ।।
हैं सहोदर साथ तेरे, या कि उड़ रहा तू अकेला।
साधकर तू लक्ष्य अपने, सत्य को पा जायेगा ।।
निरख अभिसार पथ, तू प्रेमगीत गा पायेगा।
श्रम बिन्दुओं से झलकता उन्नत तेरा ललाट हो।
विव्हल करते भावों का खुला हृदय कपाट हो ।।
गर साथ तेरे गुरु वाणियां, दृश्य मनोहर पा जायेगा।
अभीष्ट के मधुर मिलन में, जब स्निग्ध खुद को पायेगा ।।
निरख अभिसार पथ, तू प्रेमगीत गा पायेगा।
अमर हुआ है राग उनका, तान उनकी, गान उनका।
तोड़ कर सारी हदें, अभिसार पथ पर बढ़ गये ।।
चढ़ गये उत्तुंग शिखर, बादलों से मिल गये।
बूंद बन अनुराग की, प्यास जन की बुझायेगा।।
निरख अभिसार पथ, तू प्रेमगीत गा पायेगा।

प्रारब्ध

शब्द बिना लिपिबद्ध हुए,
भाव बिना प्रतिबद्ध हुए
मूर्ति बिना स्तब्ध किये
सच कैसे खुद को जी पाता।
प्रारब्ध तो रीता ही रह जाता॥
अहं भाव है प्रबल यहां
सुकर्म स्वत: होते मनमर्जी
जब कल्याण भाव स्थिर हो
गर ऐसा भाव न जी पाता।
प्रारब्ध तो रीता ही रह जाता॥
ज्ञानकोष अवरुद्ध हुआ तो
तिमिर घनेरा हो जाये
बिन जाने, बिन देखे, बिन अनुभव के
क्या कोई यहां कुछ कर पाता।
प्रारब्ध तो रीता ही रह जाता॥
क्यों न पढ़े ग्रन्थों को कोई
गूढ़ ज्ञान के भंडारे
क्यों न लखे मूर्ति भला
गर समझ को विकसित न कर पाता।
प्रारब्ध तो रीता ही रह जाता॥
है हस्तरेख से परे हाथों का श्रम
जो बस मेधा को कर प्रबल

सत्यम, शिवं, सुंदरम को दे मूर्त रुप
कर्म पथ पर है बढ़ जाता।
प्रारब्ध तो उसका गढ़ जाता।।

अब ना कुछ भाये

कितनी ही कोशिश कर डालो चढ़ते सूरज में अपनी ही छाया का सिर, जो मंजिल, कब छू पाया।
अनवरत प्रवाह समय का देखो, सिर पर आया हाथ क्षण भर उसको रोक न पाया॥
तिमिर हुआ घनघोर, पसरा सन्नाटा, दिन भर चला साथ जो साया, अस्तित्व बचा ना पाया।
पर है तो कुछ ही समय की बात, अवसर फिर देगा दिनकर, कर विचार, व्यूह बनाया, रात बिताया।
फिसला समय रेत सा देखो, अज्ञानी मैं, मोहजाल में, मोती अवसर के चुन ना पाया॥
लौट लौट कर आते अक्सर, जो नश्वर, कान्तिहीन सिर हैं मेरे, कृत व्यर्थ, अर्थ का कुछ भी ना अपनाया।
अब तो छोड़ रहे हैं साथ, छद्म भेष में ये साये, अज्ञानी मन है, तो दिनकर क्या कर पाया॥
नश्वर शरीर की गत तो सब जानें, ए मूरख मन तू क्यों कहे व्यथा असफलता की गाथा।
यूं ही मानव इस जग में आए जाए, सब नश्वर, फ़िर क्यूं भरमजाल में भरमाता॥
दिनकर फिर डूबा, घनघोर निशा, अनहद अट्टाहास, डस रहे विकृतियों के जाये।
वलयों की मदमाती कक्षा से भटके, ठिठके, ठगे से, अब ना कुछ भाये॥

तृष्णा तू न गयी मन से

सृजन का फूटा अंकुर, मन में जाग गई रे तृष्णा।
बहुत दिनों तक चौबारे थी, ना जाने कब घर कर बैठी, अहं भाव की तृष्णा,
मोह पाश के बन्धन सारे, संबन्धों का पलना,
आग्रह उनके, कौतुक अपने, ज्यों बारिश का गिरना,
सृजन का फूटा अंकुर, मन में जाग गई रे तृष्णा।

बोली फूटी, हुयी आश प्रबल, उपजी मन में चाह,
अनजाने चेहरे पहचाने, पहचानी जग की राह।
स्वच्छन्द विचरना, गिरना, उठना, मोहपाश में कसना,
सृजन का अंकुर फूटा, मन में जाग गई रे तृष्णा।

खुली आंख से सपने देखे, देखे वैभव सारे,
नये नये आयामों को तृष्णा पांव पसारे।
सहमा -बहमा, ठहरा- ठिठका कस गये मन के तारे,
सुलझ न पाये उलझी गुत्थी, उलझ गए रे नैना।
सृजन का फूटा अंकुर, मन में जाग गई रे तृष्णा।

धरम गया, ईमान गया, गया ज्वार शक्ति का तन से,
दृष्टि गयी, मति भ्रष्ट हुयी, ज्यों वृष्टि गयी घन से,
भक्ति गयी, रीति गयी, प्रीति गयी ज्यों जग से
विस्तृत हुआ संसार, पर तृष्णा तू न गई मन से।

बैसाखी पांचें

अथाह है अतीत का समुद्र, अगणित झलकते मोतियों की बातें।
कूकती कोयल की मीठी तान, लम्बी किस्सागोई की अधजगी रातें ।।
आया बसंत गद्दर हुयीं फलियां, बौराये आम, खिले कमल।
स्वेद कणों से सिंचित स्वर्णिम गेहूं, भरा चना, हलधर हुए सफल ।।
बहे मलय समीर, कल- कल कर जलधार नदिया की बलखाती।
अपूर्व तेज़ दिनकर का, बिंदिया ज्यों उनींदी मुग्धा की मदमाती।।
अति उमंग, स्वप्न घनेरे, बेहद खिलीं दिलों की बाछें।
साहलग, लगन, मिलन के फेरे, जब निअराई बैसाखी पांचें ।।
मिलन के मेले गांव जनों के, स्वांग पुराने, दूर बजे नगाड़े।
गुपचुप गुपचुप राह दिखी, टेर लगी, टोल बनी पिछवाड़े।।
अति आनंदित मन, देख देख अठखेलीं, पुरवा संग भागे।
पर ये क्या? अलख सुबह जब घर को लौटे
मनचाही राहों पर, साफी बांधे बप्पा थे सबसे आगे।।

बेशकीमती रत्न बटोर लाता मन

उलट देता हूं जब सफे ज़िन्दगी के
सुनहरी नज़र आती सहर ख्वाबों भरी रात की
निकले नहीं थे पंख, उड़ना भी तो था नहीं जेहन में
पौ फटने से पहले उठ जाऊं मैं,
जीत लूं दौड़ कर, अब्बल आऊं मैं उस दिन
चांद अभी डूबा नहीं, शुक्र भी था टिमटिमाया
खोलकर चुपचाप जब घर के पिछवाड़े का दर
कुछ डरा, कुछ सहमा, कुछ उद्वेलित सा मन
नंगे पांव तले ठंडी दूर्वा की वो सिहरन
सौंधी धान की खुशबू, वाह! री पुरवइया पवन
समय की सेज पर छोड़े कितने ही बेशकीमती रत्न
बटोर लाता मन।

आत्म श्लाघा की लौ

तीज त्यौहार, व्रत उपासना घने बे ईमान हो गए
प्रगाढ़ प्रेम, मान सम्मान यों ही गुमनाम खो गए।
न रहा सौंधी सुगंध का चौका, न निर्जल व्रत की बातें
बिन आह प्रेम की पींगें, बस अहंकार भरी सौगातें।
चढ़ी भेंट चकाचौंध को, निश्छल व्यवहारों की आभा
चपल चितेरी माया तेरी महिमा में सब अवसान हो गए।
तीज त्यौहार......……..…... ।
मेल मिलाप, सहयोग घनेरा, अब रूहों के साये,
अंजान डगर, लम्बी पगडंडी के राही सब हुए पराये
विपुलता के महिषासुर ने रौंद रौंद सब किए सफ़ाए।
कांधे पर सिर, आंखें करती बातें कहीं और,
राज प्रासाद के रहवर सारा बोझ उठाए बस दिखते हैं।
विस्तृत राजमार्ग भी कुछ ना कर पाए,
दूरी बढ़ी, न बढ़ी मिलन की चाह
आस्तीन के व्याल पले बढ़े और और जवान हो गए।
तीज त्यौहार........... ।
न उर्मिला का नेह, न भरत की बातें,
न गुरु वशिष्ठ सी सीख, न सुकून भरी रातें
ईद का चांद हुई रघुकुल की रीत, प्रीत की मत पूंछो
अरे उल्टी चले वयार उष्ण हुई सर्द रातें
असुर प्राणवान, देव हुए रुक्सत, ये कैसा परिदृश्य?
आत्म श्लाघा की लौ में सब परवान हो गए।

पर बड़ा हुआ जो दरख़्त भली कर एहसान चुकाये

बात सुनी है चुपके चुपके औसारे में दुबके दुबके
कभी आह कभी उफ्फ कभी सन्नाटा सा छा जाए।
कुछ खट्टी कुछ मीठीं यादें, यादों से बनती फरियादें
चुप न रहेगी कुछ तो कहेगी ये दुनियां को कब भाए।
पर फूले, फले और बढ़े, सर्दी, वर्षा यूं ही लहराये
बड़ा हुआ जो दरख़्त भली कर एहसान चुकाए।
वन महोत्सव, नन्हें नन्हें शाश्वत गहनें, सुन्दर से ये गाछ
सजे धजे थे हम सब, मिल बैठाये बिन आश।
दिन प्रतिदिन आगत यौवन, खिंचीं तस्वीरें मनुहारी
विविध परिधान, गोल कपोल सुन्दर छवि बलिहारी।
हुए निष्णात, पंख लगे, उड़ चले, पसरा अतुल प्रकाश
निधि संचय, जमीं जड़े, जमीं तरुणाई, परिचित आभास।
दिन, मास, बरस सब बीत रहे, बीत रही है आश
गूंज रहे बस गत कलरव, करतव, उनके ठठ्ठा हास।
हां बड़ा हुआ जो दरख़्त, भली कर एहसान चुकाए।
पर अपना, सपनों का सपना, दूर कहीं मन्द मन्द मुस्काये।

जब भी घर पर नेगी आए

जब भी घर पर नेगी आए।
घर में बाजे ढोल नगाड़े
और बजे बधाए।
आंगन लीपे, मुंडेर सजाईं,
दीवारें भी मटिया से चिकनाईं।
कितने खुश थे परिजन अपने
नये नये परिधान सिलाए।
लेने देने कपड़े गहने
लम्बी चली देश की बातें।
बातों में बातें निकलीं
कितनी ही व्यस्त रातें निकलीं।
मंसूबे सबके एक, नेक दिलों की बातें निकलीं।
कुछ आहत, कुछ राहत, कुछ सपनों की सौगातें निकलीं।
बात पुरानी है, पर नहीं कहानी है।
याद करूं तो लगता है, जी को कुछ खलता है।
बस यूं ही कुछ अपने रूठे, अपनों से कुछ उनके टूटे।
बात संभाली, हंसी ठिठोली,
ये रो ली, वो रो ली,
फिर क्या? शादी हो ली।
आत्म प्रवंचना के स्वर फूटे,
जब भी घर पर नेगी आए।

धैर्य न खो

अब कैसे पतियाये
मन्नत, पूजा, अर्घ, नमन,
दान, पुण्य, या अर्पन,
ना जानें क्या क्या जतन किये।
आये जोशी, मौला, और पुरोहित
घर में आह्वान नव प्राण किये।
उत्सुक मन, भाव प्रबल
ग्रह दशाओं को जस का तस पाए
अब कैसे पतियाये।

'कर्म प्रधान विश्व रचि राखा'
गुरुवर ऐसा मंत्र सिखाए।
षडयंत्रों की धूनी में
युक्ति कोई काम न आए।
शून्य ताक कर
मौन साध कर
वही खड़े, फिर फिर पछताए।
मेरे प्रिय जन कुछ तो बोलो
अब कैसे पतियाए।

याद करूं मैं कितनी बातें
याद करूं मैं कितनी रातें

जब जब घोर निशा में
उत्तर दिश ध्रुव को पाऊं
सोच सोच मन को समझाऊं।
दृढ़ प्रतिज्ञ हो, धैर्य न खो,
कर प्रयत्न, फिर कर प्रयत्न
नित नवचारों की राह पकड़
मंज़िल को अपनाए।

बस ऐसे ही पतियाये।

कोई इसका अर्थ बता दे

जब जब जज्जबातों के तूफान घिरे
जब जब षडयंत्रों के जाल बिछे
अंधी बदहवास उनकी चालों ने
कितने यौवन कुचले, कितने आशियानें जलाए।
तुम्हीं थे, तुम्हीं तो थे, जो हाथ बढ़ाए,
राह दिखाए, काम बनाए,
सामंजस्य के फूल खिलाए।
आज वही अंधियारी
कलुषित बेला आई
उत्सुक आंखें ढूंढ रही हैं, व्यवहल हो पुकार रही हैं
ओ मानवता के अजेय पुरोधा
ऐसा जाना रास न आया।
या तुझको ये जग नहीं भाया।
कोई इसका अर्थ बता दे।

कराह

है प्रफुल्लित मन आज देख आवृत्ति
घटी हुई घटनाओं की।
चहल-पहल वो ही है सारी,
पर बहक रही टोली ललनाओं की।
अपने ही तनयों का व्यवहार निराला है
सोच रहा है मन
क्या सम्मानित दूरी को हमने पाला है?
अदब, लिहाज, परहेज चलन से लुप्त हुए
इस लोपन पर आविष्कारों का साया है।
हां समय ने बदले हैं अभिवादन के तौर तरीके
पर उच्छृंखल हो,
नहीं स्वतंत्रता की परिभाषा।
जीवन की आपाधापी ने
डस लिए हैं सौम्य सरल अरमान
ओछे करतव, कलरव करते
ठिठक रहे हैं शिथिल हुए सुजान।
पढ़ लिख कर जब दूरी हमने नापी थी।
समारोह वैभव प्रदर्शन
माया पोषित ओछी प्रवृत्ति,
हमारी संस्कृति
ऐसी घुसपैठ
कब हमने भांपी थी ?

वजह मुस्कुराने की

चाहोगे तो मुस्कुराने की सौ वजह मिल जायेंगी
गिनोगे तो बांछें खिल जायेंगी।
मुड़ कर देखोगे लगाये हुए पेड़,
बाल संवार, बस्ता लटका पढ़ने जाती अन्नू,
और फिर अन्नू की अन्नू,
गांव से शहर और शहर में अपना घर,
फिर घर का विस्तार, अब सच में भरे आगार,
जब भी आंख बन्द करोगे
सुकून आ जायेगा, और आ जायेगा अतीत का वो लम्हा
कुछ शैतानी भरा
अनायास ही मुस्कुराने को।

चाहोगे तो मुस्कुराने की सौ वजह मिल जायेंगी
गिनोगे तो बांछे खिल जायेंगी।
युवा जीवन के केनवास से
समय धूल की परत हटा के तो देखो
कैसे मुमकिन हुआ था दो कटोरियों का लाना
और फिर उनका विलुप्त हो जाना।
समय गुजरा, प्रकाश पसरा,
आल्हादित मन घर आंगन,
बिखरे सिगरे ठांव खिलोने
और फिर चुपके से किताब में
नन्हीं याशू का गोल गोल कुछ लिख जाना।
आज उसे देखो तो, तैयार है शिकन काफ़ूर हो जाने को
और अनायास ही वज़ह मिल जायेंगी मुस्कुराने को।

उद्धार

सोचा कि आज कुछ अच्छा पढ़ूं,
ढूंढते ढूंढते अलमिरा से निकाल लाया
" हमारे पूर्वज "।
पलटकर सफे प्यार से
एक एक कर तैर गईं
उन पुरोधाओं की जीवनियां
जिन्होंने बनाया था
स्वर्णिम ये प्यारा वतन।
ध्रुव की प्रतिज्ञा, प्रहलाद की भक्ति
भीम सा बल, सिद्धार्थ सी विरक्ति,
युधिष्ठिर सा ज्ञान
कितने विलक्षण थे वो
जिन्होंने रखी थी सुदृढ़ नींव।
फिर
सोचा कि आज कुछ अच्छा देखूं।
देखते देखते पहुंच गया अपने गांव।
दसक था साठ का।
मैं था कुल आठ का।
वो ओस पड़ी दूर्वा वाली मेंड़।
दोनों तरफ खेत में ज्वार की बाड़ पर बुने मकड़ जाल के ताने-बाने।
उस पार विजयी मुद्रा में स्कूल की राह पर
धान की सोंधी खुशबू से सराबोर।

जलक्रीड़ा में मग्न वो सारस के जोड़े,
और दूर क्षितिज में कोहासे की चादर ओढ़े
वो गांव।
मंत्रमुग्ध सा मैं निहाल, देख छटा अभिराम।
फिर
सोचा कि आज कुछ अच्छा लिखूं।
और लिख गया मन के उद्गार जो
रह रह कर कौंध जाते हैं अब।

सहर ज़िन्दगी की

सहर ज़िन्दगी की थी तीज़ त्यौहारों से भरी
बाजे गाजों से भरी रस्मों और साज़ों से भरी।
हुईं थीं बैठकें कईं, हुए थे चर्चे बड़े,
बड़े ही मान और मनुहार की बातें,
कटीं थीं रस भरे गीतों से सराबोर रातें।
उद्गम नदी के वेग सी इठलाती,
नद तली में शैल से टकराती लहर सी
राह में आये सभी को आगोश में समाती
वो सहर ज़िन्दगी की। वो सहर ज़िन्दगी की।
ओस कणों सी चमकती सहर ज़िन्दगी की,
गांव की जलकुंभी वाली पोखर में

कलरव करते जलचर,
पनघट पर पनिहारिन के
अर्ध भरे घटनादों सी सहर ज़िन्दगी की।
चूड़ियों से हांथ भरे देख, मनिहारिन के आशीषों सी,
मुग्धा के पांव पसारे बजते घुंघरूओं वाली पाज़ेबों सी,
वो सहर ज़िन्दगी की । वो सहर ज़िन्दगी की।
ऐ शामे ज़िन्दगी तू ही बता,
क्या लौट कर आई कभी
वो खुशनुमा सहर ज़िन्दगी की ।
सहर ज़िन्दगी की। सहर ज़िन्दगी की।

ये पागल उत्कंठा

जीवन पथ, घर आंगन के उपवन में
जब सांस चली अरु आंख खुली
नैसर्गिक घटकों में सबसे पहले साथ चली
ये पागल उत्कंठा।
उम्र बढ़ी, आश बढ़ी, बढ़े जगत नज़ारे
देहरी आकर बाहर झांके, मिले सहचर सारे
बहुतेरी बातों में लगी इक बात भली
हर पल उनसे मिलने की
ये पागल उत्कंठा।
कर्म क्षेत्र ही सबसे प्यारा
लगता जीवन का बस एक सहारा,
कितने ही सबकों की बस एक साद
बेकल मन, कर्म पा जाने की
ये पागल उत्कंठा।
एक -एक कर आती जातीं
कितनीं ही घटनाएं
कुछ चाहीं, कुछ बेहद चाहीं
फिर भी जस की तस
ये पागल उत्कंठा।
और हुई है प्यास तेज़ यहां
कितनीं ही मटकी भर लाऊं

शिथिल हुए अंगों पर भारी
कुछ कर जाने की
ये पागल उत्कंठा।

उपसंहार

शुरू कहानी की रचित प्रस्तावना के योग्य सूत्रधार पिता
लगता है मुझको, जीवन का मैंने बस उपसंहार लिखा।
अंखियन कजरा, मस्तक रुचना और ढिटौना साजे
माथे घुंघराली लट, हाथ कंकनीं, कमर करधनी बाजे।
तिनके चुन चुन शुभ शैशव की मां तुम अनुरागी शिल्पा
अपने ही आंचल रोकीं, तूफ़ानों सी कितनी ही जल्पा ।।
किशोर हुए जीवन को नाना विधि गढ़ गुरुओं ने राह दिखाईं
जीवन उनका, सीखें उनकी, प्रकाश पुंज सी बढ़ आगे आईं।
आयी जब यौवन की आंधी, उसमें भी अपना था क्या मेरा
सुन्दर साथी अपनों की अनुकम्पा, उनकी चीजें, उनका डेरा।।
गतिशील कथानक के सारे अवयव आ बैठे कब, पता नहीं
संघर्ष, निदान लघु, गुरुओं पर भारी, कैसी परिणिति पता नहीं।
जो नहीं सुना था अब तक मैंने, विहंस गले का हार बना
हर पल, हर फल का मैं पोषक, सन्तति मत उपसंहार बना।।